इकाई 9 प्रतिमानाटकम् (प्रथम अङ्क) – भाग 2

इकाई की रूपरेखा

9.0 उद्देश्य

9.1 प्रस्तावना

9.2 प्रतिमानाटकम् (प्रथम अङ्क) – श्लोक 16-31

9.3 सारांश

9.4 शब्दावली

9.5 कुछ उपयोगी पुस्तकें

9.6 बोध/अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

9.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप –

- राम का कैकेयी और दशरथ के प्रति अनुराग जान सकेंगे।
- असमय में किए गए क्रोध को शमित करने की शिक्षा पा सकेंगे।
- परिवार का कोई भी ज्येष्ठ अपनी सन्तति के प्रति कभी अन्याय नहीं करता, यह भी जान सकेंगे।
- पारिवारिक सौमनस्य तथा भ्रातृ प्रेम के विषय में महाकवि भास के विचारों को जान सकेंगे।

9.1 प्रस्तावना

प्रिय विद्यार्थियों! प्रथम इकाई में आपने पढ़ा कि राम का राज्याभिषेक मन्थरा के द्वारा कुछ कहे जाने पर महाराज दशरथ के द्वारा रोक दिया जाता है। उसी प्रसंग में राम यह भी बताते हैं कि भरत के लिए अयोध्या का राज्य वास्तव में शुल्क (विवाह के समय की गई शर्त) रूप में देने के लिए कह दिया गया था। किसी अन्य का उस पर राज्याभिषेक निश्चय ही भरत के राज्य के अपहरण जैसा है। आपने राम की उदारता का भी परिचय पूर्व इकाई में प्राप्त किया है। कैकेयी द्वारा वन के लिए भेजे जाने पर भी राम इस पर उसका दोष नहीं मानते। वह कहते हैं कि कैकेयी एक महनीय महिला है, उसका मुझ जैसा पुत्र है तथा इन्द्र जैसे प्रभावशाली महाराज दशरथ उनके पति हैं। ऐसे में उसके द्वारा किसी भी प्रकार के दुराचार की सम्भावना नहीं की जा सकती। इस इकाई में आप यह देखेंगे कि राम वन जाने के लिए सहर्ष उद्यत हो जाते हैं। कांचुकीय उनसे बताता है कि महाराज दशरथ आपको वनगमन के लिए आज्ञा देने को तत्पर नहीं थे इसलिए कैकेयी के हठ के बाद भी राजा दशरथ आपको वन जाने की अनुमति केवल हाथ के संकेतों से दिए हैं। तत्पश्चात् वह मूर्च्छित हो गए। महाकवि भास ने इस प्रसंग में लक्ष्मण के चरित्र को भी उभारा है। लक्ष्मण धैर्य के समुद्र हैं। वह कभी भी क्षुब्ध नहीं होते किन्तु राम के वनगमन के समय जब वह क्षुब्ध होते हैं तो भास उन्हें सैकड़ों वीरों के बराबर निरूपित करते हैं। लक्ष्मण राम को ललकारते हैं और कहते हैं कि आप धनुष उठायें, दया को छोड़ें और अपने साथ हो

रहे अन्याय का प्रत्युत्तर दें। इस पर राम पुनः उदारतापूर्वक कहते हैं कि मैं राजा बनूँ या भरत, दोनों बात बराबर है। अगर तुम्हें अपने धनुष पर इतना ही विश्वास है तो राजा भरत की सेवा करो और इस धनुष को उसके पक्ष में उठाओ। राम और लक्ष्मण के बीच चलने वाला यह संवाद दो भाइयों के प्रेम बन्धन को रेखांकित करता है तथा पारिवारिक सौमनस्य के सातत्य का प्रतीक है। लक्ष्मण के हठ पर राम यह कहकर उसे निरुत्तर कर देते हैं कि हे लक्ष्मण! क्या मैं सत्य का पालन करने वाले पिता के विरुद्ध धनुष उठाऊँ? अथवा विवाह शुल्क के रूप में प्रतिज्ञात राज्य माँगने वाली कैकेयी पर बाण चलाऊँ? तुम कहो कि क्या निर्दोष भाई भरत को मारा जा सकता है? ये तीनों पाप हैं और लक्ष्मण तुम यह बताओ कि तुम्हारी शान्ति के लिए इन तीनों में से कौन सा उपाय करूँ? वार्तालाप के इसी क्रम में राम वनगमन जैसे मंगलकार्य का सम्पादन करने को तत्पर होते हैं और सीता से वन ना जाने के लिए कहते हैं किन्तु लक्ष्मण उनकी इस बात से सहमत नहीं होते और सीता लक्ष्मण के साथ वनवास की वेशभूषा धारण कर लेती है और वन जाने के लिए तीनों प्रस्थान करते हैं।

9.2 प्रतिमानाटकम् (प्रथम अङ्क) – श्लोक 16-31

मूलपाठ –

काञ्चुकीयः – अथ।

रामः – अतः परं न मातुः परिवादं श्रोतुमिच्छामि। महाराजस्य वृत्तान्तस्तावदभिधीयताम्।

काञ्चुकीयः – ततस्तदानीम्,

शोकादवचनाद् राज्ञा हस्तेनैव विसर्जितः।
किमप्यभिमतं मन्ये मोहं च नृपतिर्गतः ।।16।।

अन्वयः – राज्ञा शोकात् अवचनात् हस्तेन एव विसर्जितः। नृपतिः किमपि अभिमतं मोहं च उपगतः। इति मन्ये ।।16।।

व्याख्या – राज्ञा = महाराजदशरथेन शोकात् = कैकेयीयाचनाजनिताद् दुःखात् अवचनात्–वचनमनुक्तवैव शोकातिशयेन किमप्यनुक्तवेति भावः। हस्तेन = कर चेष्ट्या अहं विसर्जितः। 'गच्छ कैकेयीचरितं रामभद्राय निवेदय' इति वक्तुं अहं विसर्जितः = भवत्समीपं प्रेषितः। न तस्य तदा केवलं वाक्शक्तिविलुप्ता किन्तु सर्वेन्द्रियचेष्टाशून्यकारणभूतः मोहोऽप्यभूदित्याह–किमपीति। नृपतिः = दशरथः किमपि अभिमतम् कष्टतरात् प्रबोधात् किञ्चिदिष्टत्वेन मोहनं मूर्च्छनं च गतः = सम्प्राप्तः। चेतनादशायां हि दुःखमधिकं पीडयति नाचेतनावस्थायामिति तस्य तदानीं मोहमेवाभिमतमिति भावः। अत्र मोहस्य दुःखावेदकहेतोरिष्टत्वेन वर्णनात् अनुज्ञालङ्कारः। उत्कटगुणविशेषलालसया दोषत्वेन प्रसिद्धस्यापि वस्तुनः प्रार्थनामनुज्ञेति तल्लक्षणम्। अनुष्टुप् छन्दः।।16।।

अनुवाद –

कञ्चुकी – और।

राम – आर्य! इससे अधिक मैं माँ की निन्दा नहीं सुनना चाहता। अतः आप महाराज का समाचार सुनाइये।

कञ्चुकी – तब उसी समय

शोक के कारण सर्वथा बोलने में असमर्थ महाराज ने हाथ के संकेत से कैकयी के इस प्रकार के विचार से अवगत कराने के लिये मुझे आपके पास भेज दिया और स्वयं मूर्च्छित हो गये जो उस समय उनके लिये कुछ अभीष्ट बन गया।।16।।

शब्दार्थ – शोकात् = शोक के कारण, अवचनात् = न बोल पाने के कारण, हस्तेन इव = हाथों के संकेत से, विसर्जितः = जाने की आज्ञा दिया, नृपतिः = राजा दशरथ, अभिमतम् = अभीष्ट, मोहम् = मूर्च्छित होना।

टिप्पणी – नृपतिः = नृणां पतिः (षष्ठी तत्पुरुष समास), हस्तेनैव = हस्तेन+एव (वृद्धि सन्धि), किमप्यभिमतम् = किमपि+अभिमतम् (यण् सन्धि), नृपतिर्गतः = नृपतिः+गतः (विसर्ग सन्धि)।

प्रस्तुत श्लोक में अनुज्ञा अलंकार है। यहाँ अनुष्टुप् छन्द है जिसका लक्षण इस प्रकार है –

पंचमं लघु सर्वत्र सप्तमं द्वितचुर्थयोः।
षष्ठं गुरु विजानीयात् एतत् पद्यस्य लक्षणम्।।

अर्थात् जिस छन्द के प्रत्येक चरण में पाँचवाँ वर्ण लघु, छठाँ गुरु और दूसरे तथा तीसरे चरणों में सातवाँ वर्ण लघु होता है वहाँ अनुष्टुप् छन्द होता है।

मूलपाठ –

रामः – कथं मोहमुपगतः?

(नेपथ्ये)

कथं कथं मोहमुपगत इति?

यदि न सहसे राज्ञो मोहं धनुः स्पृश मा दया,

रामः – (आकर्ण्य पुरतो विलोक्य)

अक्षोभ्यः क्षोभितः केन लक्ष्मणो धैर्यसागरः।
येन रुष्टेन पश्यामि शताकीर्णमिवाग्रतः।।17।।

अन्वयः – अक्षोभ्यः धैर्यसागरः लक्ष्मणः केन क्षोभितः। रुष्टेन येन अग्रतः शताकीर्णम् इव पश्यामि ।।17।।

व्याख्या – अक्षोभ्यः इति – अक्षोभ्यः = क्षोभयितुं योग्यः क्षोभ्यः न क्षोभ्यः अक्षोभ्यः सर्वथा विकाररहितः शान्त इत्यर्थः धैर्यसागरः–धैर्यस्य = धीरतायाः सागरः = समुद्रः अतिगम्भीरस्वभावो लक्ष्मणः, केन क्षोभितः = केन कोपितः। रुष्टेन = क्रुद्धेन येन तिष्ठता, अग्रतः = अग्रदेशे शताकीर्णम्–शतेन आकीर्णम् = व्याप्तम् इव पश्यामि। रुष्ट एक एव लक्ष्मणः गर्जन् जनशतस्य गर्जनमिव गर्जनं करोतीत्यर्थः। धैर्यसागर इत्यत्र रूपकालङ्कारः। 'रूपकं रूपितारोपाद्विषये निरपह्नवे' इति तल्लक्षणम्। शताकीणमिवेत्यत्रोत्प्रेक्षालङ्कारः 'सम्भावनमथोत्प्रेक्षा प्रकृतस्य समेन यत्' इति तल्लक्षणम्। अक्षोभ्यः क्षोभित इति विरोधाभासोऽपि। 'आभासत्वे विरोधस्य विरोधाभास इष्यते' इति तल्लक्षणम्। अनुष्टुप् छन्दः।।17।।

अनुवाद –

राम – क्या मूर्च्छित हो गये।

(नेपथ्य के भीतर से)

क्या-क्या मूर्च्छित हो गये। यदि राजा का इस प्रकार मूर्च्छित होना तुम्हारी सहनशक्ति के बाहर है तो जिस कारण से इन्हें मूर्च्छा हुई है उसके प्रतीकार के लिये धनुष उठाओ– दया मत करो।

राम – (सुनकर और सामने देखकर) धैर्य में अगाध, समुद्र के समान गम्भीर इन लक्ष्मण को किसने क्षुब्ध किया है, पर इनके अकेले क्रुद्ध होने पर मैं इन्हें अपने आगे सौ वीरों के समान देख रहा हूँ।।17।।

शब्दार्थ – अक्षोभ्यः = उत्तेजित न किया जाने वाला, धैर्यसागरः = धैर्य का समुद्र, केन = किसके द्वारा, क्षोभितः = संक्षुब्ध कर दिया गया, शताकीर्ण = सैकड़ों वीरों को।

टिप्पणी – धैर्यसागरः = धैर्यस्य सागरः (षष्ठी तत्पुरुष समास), इवाग्रतः = इव+अग्रतः (दीर्घ सन्धि)।

प्रस्तुत श्लोक में उत्प्रेक्षा अलंकार और अनुष्टुप् छन्द है।

मूलपाठ– **(ततः प्रविशति धनुर्बाणपाणिर्लक्ष्मणः)**

लक्ष्मणः – (सक्रोधम्) कथं कथं मोहमुपगत इति।

यदि न सहसे राज्ञो मोहं धनुः स्पृश मा दया
स्वजननिभृतः सर्वोऽप्येवं मृदुः परिभूयते।
अथ न रुचितं मुञ्च त्वं मामहं कृतनिश्चयो
युवतिरहितं लोकं कर्तुं यतश्छलिता वयम् ।।18।।

अन्वयः – यदि राज्ञः मोहं न सहसे चेत् तदा तन्मोहकारणे धनुः स्पृश। तत्र दया मा अस्तु। स्वजननिभृतः सर्वः अपि मृदुः एवं परिभूयते अथ न रुचितं तर्हि त्वं मां मुञ्च। अहं युवतिरहितं लोकं कर्तुं कृतनिश्चयः अस्मि। यतः वयम् छलिताः।

व्याख्या – यदीति। यदि राज्ञः = तातस्य, मोहम् = विसंज्ञतां, न सहसे = न मर्षयसि चेत्, धनुः स्पृश = चापास्फालनं कुरु। मोहहेतुजने चापं व्यापारय न तु मोहिते इत्यर्थः। एतेन मोहप्रतीकाराय धनुगृहीत्वा सन्निधो भवेति व्यज्यते। तत्र दया मा अस्त्विति शेषः। त्वया मोहकारणभूते जने दया न कर्त्तव्येति भावः। स्वजने निभृतः = मौनीभूतः स्वजनकृतं सर्वं सहमानः सर्वोऽपि भवादृशः मृदुः, दयालुः, क्षमावान् एवं अनेन प्रकारेण, परिभूयते तिरस्क्रियते। पक्षान्तरे आह– यदि न रुचितम् स्वजनविषये चापग्रहणं भवते = नाभिलषितं तर्हि मां मुञ्च = आज्ञापय। अहं, लोकम्, युवतिरहितं = युवतिजनशून्यम्, कर्तुम् = सम्पादयितुम्, कृतनिश्चयः अस्मि। युवतिजने प्रद्वेषकारणं निरूपयन्नाह– यत् इति। यतः यस्मात् कारणात् वयं छलिताः वञ्चिताः सन्। अत्र धनुग्रहणे दयापरित्यागरूपे वाक्यार्थेः यतश्छलिता वयम् इति वाक्यार्थो हेतुः तेन काव्यलिङ्ग नामालङ्कारः। 'हेतोर्वाक्यपदार्थत्वे काव्यलिङ्ग निगद्यते' इति तल्लक्षणम्। हरिणीवृत्तम्।।18।।

अनुवाद – (धनुष-बाण हाथ में लिये लक्ष्मण का प्रवेश)

लक्ष्मण – (क्रोधपूर्वक) क्या? क्या? आप पूछते हैं कि अचेत कैसे हो गये?

यदि राजा का इस प्रकार मूर्च्छित होना आपकी सहनशीलता के बाहर है तो मूर्च्छित होने के कारण का प्रतीकार करने के लिये धनुष उठाइये, उस पर दया किसलिये? स्वजनों के विषय में चुप रहकर सहन करने वाला तथा कोमल स्वभाववाला पुरुष इसी प्रकार तिरस्कृत होता है किन्तु यदि आप स्वयं प्रतीकार नहीं करना चाहते तो मुझे आज्ञा दीजिये। मैंने इस लोक को युवतिजनों से शून्य करने का निश्चय कर लिया है क्योंकि युवती के कारण ही हम लोग आज छले जा रहे हैं ।।18।।

शब्दार्थ – यदि राज्ञः = महाराज दशरथ का, मोहम् = मूर्च्छित होना, न सहसे = सहन नहीं कर सकते, धनुःस्पृश = धनुष धारण करो, मा दया = दया मत करो, स्वजननिभृतः = स्वजनों के कृत्यों को शान्तिपूर्वक सहन करना, मृदुः = कोमल स्वभाव वाले लोग, एवं परिभूयते = इस प्रकार से पराजित होते हैं, न रुचितम् = यदि रुचिकर नहीं लगा, माम् मुञ्च = मुझे छोड़ दो, अहं लोकम् = मैं इस लोक को, युवतिरहितम् = स्त्रियों से रहित, कृतनिश्चयः = दृढ़ निश्चय करना, छलिताः = छलपूर्वक।

टिप्पणी – सर्वोऽपि = सर्वः+अपि (पूर्वरूप सन्धि), सर्वोऽप्येवं = सर्वोऽपि+एवम् (यण् सन्धि), यतश्छलिताः = यतः+छलिताः (विसर्ग सन्धि), कृतनिश्चयः = कृतः निश्चयः येन सः (बहुव्रीहि समास), स्वजननिभृतः = स्वजनेषु निभृतः (सप्तमी तत्पुरुष समास)।

प्रस्तुत श्लोक में काव्यलिंग अलंकार है। यहाँ हरिणी छन्द है जिसका लक्षण इस प्रकार है **''रसयुगहयैर्नसो म्रौ स्लौ गो यदा हरिणी तदा''** अर्थात् जिस छन्द में नगण, सगण, मगण, रगण, सगण, एक लघु और एक गुरु वर्ण हों तथा छः, चार और सप्तम वर्णों पर यति हो वह हरिणी छन्द कहलाता है।

मूलपाठ –

सीता – आर्यपुत्र ! रोदितव्ये काले सौमित्रिणा धनुर्गृहीतम् । अपूर्वः खल्वस्यायासः। (अय्यउत्त! रोदिदव्वे काले सोमित्तिणा धणू गहीदं। अपूव्वो क्खु से आआसो।)

अनुवाद –

सीता – आर्यपुत्र! लक्ष्मण ने इस रोने के अवसर पर अपना धनुष उठाया है। इनका इस प्रकार का क्षोभ तो इससे पहले कभी नहीं देखा गया।

मूलपाठ –

रामः – सुमित्रामातः! किमिदम्?

लक्ष्मणः – कथं कथं किमिदम्?

क्रमप्राप्ते हृते राज्ये भुवि शोच्यासने नृपे।
इदानीमपि सन्देहः किं क्षमा निर्मनस्विता? ।।19।।

अन्वयः – क्रमप्राप्ते राज्ये ह्रते नृपे भुवि शोच्यासने इदानीम् अपि सन्देहः किं क्षमा निर्मनस्विता ।।19।।

व्याख्या – क्रमप्राप्ते–'क्रमेण पितुरनन्तरम् ज्येष्ठजातेन राज्यम् प्राप्तव्यम्' इत्येवं रूपेण प्राप्ते राज्ये ह्रते = संछिन्ने सति। नृपे – राज्ञि भुवि = भूतले शोच्यासने–शोच्यम्–शोकाहम् आसनम् = स्थितिर्यस्य तस्मिन् तथाभूते न तु सुखासने इदानीमपि = अस्यामपि स्थितौ, सन्देहः प्रतीकारनिश्चयाभावः। किं क्षमा नाम निर्मनस्विता आत्माभिमानशून्या। नैवेत्यर्थः। वीरा हि क्षमाकृते स्वाभिमानं न त्यजन्ति। भवतापि स्वाभिमानशून्या क्षमा नालम्बनीया वीरजनस्यानुचितत्वान्। अतः तत्र प्रतीकारपरो भव। सन्देहो न कर्त्तव्यः इति भावः। यथा एतादृश्याम् स्पष्टापकारितायां प्रकटं प्रतीतायामपि तव कर्तव्यानवधारणरूपः सन्देहः क्षमया गौरवभावशून्यतया वा प्रसूतः इति न ज्ञातुं शक्नोमीति तात्पर्यम्। समुच्चयालङ्कारः। अनुष्टुप् छन्दः।।19।।

अनुवाद –

राम – सुमित्रानन्दन यह क्या?

लक्ष्मण – क्यों क्या अब भी पूछ रहे हैं कि यह क्या?

वंशपरम्परा के क्रम से प्राप्त राज्य छीन लिया गया। महाराज भी शोचनीय अवस्था में पृथ्वी पर पड़े हुए हैं तब भी आप किमिदम् कहकर सन्देह कर रहे हैं। इस प्रकार का सन्देह क्या क्षमा का फल है अथवा स्वाभिमानशून्यता का फल है।।19।।

शब्दार्थ – क्रमप्राप्त = परम्परा के क्रम से प्राप्त, राज्ये = राज्य के, ह्रते = हरण कर लिए जाने वाले, नृपे = राजा दशरथ के, भुवि = भूमि पर, शोच्यासने = शोचनीय अवस्था में होने पर, इदानीमपि = अब भी, निर्मनस्विता = स्वाभिमान से शून्य होना।

टिप्पणी – क्रमप्राप्तः = क्रमेण प्राप्तः (तृतीया तत्पुरुष समास), शोच्यासने = शोच्य+आसने (दीर्घ सन्धि), निर्मनस्विता = निर्गता मनस्विता यस्मात् (बहुव्रीहि समास)।

प्रस्तुत श्लोक में समुच्चय और काव्यलिंग अलंकार है। यहाँ अनुष्टुप् छन्द है।

मूलपाठ –

रामः – सुमित्रामातः! अस्मद्राज्यभ्रंशो भवत उद्योगं जनयति। आः, अपण्डितः खलु भवान्।

भरतो वा भवेद् राजा वयं वा ननु तत् समम् ।
यदि तेऽस्ति धनुःश्लाघा स राजा परिपाल्यताम् ।।20।।

अन्वयः – भरतो वा राजा भवेत् वयं वा। ननु तत् समम्। यदि ते धनुःश्लाघा अस्ति तदा स राजा परिपाल्यताम्।।20।।

व्याख्या – भरतो वा राजा भवेत् वयं वा राजानो भवेम। तदन्यतराभिषेचनम् समम् = तुल्यम् ननु निश्चये। यदि ते धनुःश्लाघा = धनुषो गर्वः अस्ति तदा स राजा नवाभिषिक्तः भरतः परिपाल्यताम् तस्य सहायको भूत्वान्तरेभ्यो बाह्येभ्यश्च विघ्नेभ्यः रक्ष्यतामित्यर्थः किञ्च मद्विषये त्वया चिन्ता न कार्या। रोषम् कोपावेगम्। धारयितुम् = नियन्तुम्। न शक्नोमि तदत्र स्थित्वालमन्यत्राऽवस्थितेन किमप्यन्यदवाच्यमुच्येत। अकार्यं वा क्रियते तदन्यतो प्रस्थीयते इत्यर्थः।।20।।

अनुवाद –

राम – सुमित्रानन्दन! हमारे राज्य से विभ्रष्ट हो जाने के कारण तुम इस प्रकार उत्तेजित होकर प्रयत्नशील हो। आप बुद्धिमान् नहीं हैं।

चाहे भरत को राज्य मिले अथवा मुझ राम को दोनों बातें एक समान ही हैं यदि तुम्हें अपने धनुष पर अभिमान है तो इस धनुष से राजा भरत की रक्षा करो ।।20।।

शब्दार्थ – भरतः = भरत, वा = अथवा, समम् = समान होना, ते = लक्ष्मण की, धनुःश्लाघा = धनुर्विद्या पर गर्व होना, राजा = भरत।

टिप्पणी – धनुःश्लाघा = धनुषः श्लाघा (षष्ठी तत्पुरुष समास), तेऽस्ति = ते+अस्ति (पूर्वरूप सन्धि), भरतो वा = भरतः+वा (विसर्ग सन्धि)।

प्रस्तुत श्लोक में अनुष्टुप् छन्द है।

मूलपाठ –

लक्ष्मणः – न शक्नोमि रोषं धारयितुम्। भवतु भवतु। गच्छामस्तावत् । (प्रस्थितः)

रामः – त्रैलोक्यं दग्धुकामेव ललाटपुटसंस्थिता।

भ्रकुटिर्लक्ष्मणस्यैषा नियतीव व्यवस्थिता ।।21।।

अन्वयः – त्रैलोक्यं दग्धुकामा इव ललाटपुटसंस्थिता एषा लक्ष्मणस्य भ्रकुटिः नियती इव व्यवस्थिता ।।21।।

व्याख्या – त्रयो लोका एव त्रैलोक्यम् = भुवनत्रयम् दग्धुकामेव दग्धु कामो यस्या सा दग्धुकामा दिधक्षन्ती इव ललाटपुटसंस्थिता = कपालमध्यसंस्थिता एषा प्रत्यक्षदृश्या लक्ष्मणस्य भ्रकुटिः नियती इव = विधिरेखा इव व्यवस्थिता समुद्यता। ललाटपुटसंस्थिता इति नियत्यामपि विशेषणत्वेन योज्यं नियत्यपि ललाटपुटमध्ये एवं संतिष्ठते। उपमालङ्कारः। अनुष्टुप् छन्दः।।21।।

अनुवाद –

लक्ष्मण – मैं इस समय अपना क्रोध रोकने में असमर्थ हूँ। तो ठीक है, इस समय अन्यत्र जाता हूँ। (ऐसा कहकर प्रस्थान करना चाहते हैं।)

राम – समस्त त्रिलोक को भस्म करने की इच्छा करती हुई ललाट तक चढ़ी हुई लक्ष्मण की ये टेढी भौंहे भाग्यरेखा के समान अपने निश्चय पर दृढ हैं। अच्छा लक्ष्मण, इधर तो आओ।।21।।

शब्दार्थ – त्रैलोक्यम् = तीनों लोकों को, दग्धुकामेव = जलाने के लिए उद्यत हुई थी, ललाटपुटसंस्थिता = मस्तक पर स्थित, भ्रकुटिः = भौंहें, नियतीव = भाग्य के समान।

टिप्पणी – दग्धुकामा = दग्धु कामाः यस्याः सा (बहुव्रीहि समास), भ्रकुटिः = भ्रुवोः कौटिल्यम् (षष्ठी तत्पुरुष समास), ललाटपुटसंस्थिता = ललाट पुटे संस्थिता (सप्तमी तत्पुरुष समास), दग्धुकामेव = दग्धुकामा+एव (गुण सन्धि), लक्ष्मणस्यैषा = लक्ष्मणस्य+एषा (वृद्धि सन्धि), नियतीव = नियति+इव (दीर्घ सन्धि)।

प्रस्तुत श्लोक में उपमा अलंकार और अनुष्टुप् छन्द है।

मूलपाठ –

सुमित्रामातः! इतस्तावत्।

लक्ष्मणः – आर्य? अयमस्मि।

रामः – भवतः स्थैर्यमुत्पादयता मयैवमभिहितम्।

ताते धनुर्नमयि सत्यमवेक्षमाणे
मुञ्चानि मातरि शरं स्वधनं हरन्त्याम्।
दोषेषु बाह्यमनुजं भरतं हनानि
किं रोषणाय रुचिरं त्रिषु पातकेषु।।22।।

अन्वयः – सत्यमवेक्षमाणे ताते धनुः नमयि। वा स्वधनं हरन्त्यां मातरि शरं मुञ्चानि। वा दोषेषु बाह्ययम् अनुजं भरतं हनानि। एषु त्रिषु पातकेषु रोषणाय तव किं रुचिरम्।।22।।

व्याख्या – सत्यं पूर्वं प्रतिज्ञातवचनम् अवेक्षमाणे द्रष्टरि पालयतीत्यर्थः। ताते पितरि दशरथे धनुः चापम् नमयि नमयानि अत्र 'नमयि' इत्यपाठः। यद्वा ताते धनुः मयि न इत्येवं विगृह्यान्वयः कार्यः। स्वधनं विवाहकाले प्रतिज्ञातकारणेन समस्तमेतद्राज्यं तदीयमेवेति तादृशं राज्यम् अपहरन्त्याम् = आददन्त्याम् मातरि = कैकेय्यां शरं मुञ्चानि प्रश्नकाकुः वा दोषेषु दोषेभ्यः बाह्यं बहिर्भूतम् निर्दोषमिति यावत् भरतं हनानि किम् हन्याम् किम् इत्यत्रापि काकुः। एषु पूर्वोक्तेषु त्रिषु पातकेषु पितृमातृभ्रातृवधेषु किं कतमद् तव रोषणाय कोपनाय रुचिरम् अभीष्टम् मनः प्रसादकारकमिति भावः। पापमूलकोऽयं तव रोषः निर्दोषेष्वेषु त्रिषु कमप्येक हत्वा पापमेवार्जयेदित्यर्थः। तथा हि तातः प्रतिश्रुतमेव राज्यमर्पयति तेन स्वप्रतिज्ञा पालनं करोति। माता च शुल्करूपेण स्वस्यै प्रतिज्ञातमत एव स्वकीयमेव धनं हरति। भरतस्तु राज्यापहारविषये न किमपि जानाति अतः एषु निरपराधस्य कस्यापि वधः गर्हित एव भवेदित्यर्थः। अत्र विशेषणानां साभिप्रायत्वात्परिकरालङ्कारः। वसन्ततिलका वृत्तम्।।22।।

अनुवाद –

लक्ष्मण जरा इधर तो आना।

लक्ष्मण – आर्य! यह आया।

राम – तुम्हारे क्रोध को शान्त करने के लिये ही मैंने ऐसा कहा है। अब तुम्हीं बताओ कि क्या पिताजी पर धनुष उठाया जाये जो अपनी प्रतिज्ञा का पालन करना चाहते हैं, या माता पर बाण चलाया जाये जो (विवाहशुल्क में पूर्व प्रतिज्ञात) अपना धन राजा से चाह रही है अथवा अनुज भरत को ही मारा जाये जो सभी प्रकार के दोषों से रहित है, इस प्रकार पितृ, मातृ एवं भ्रातृवध रूप इन तीनों पापों में कौन सा पाप तुम्हारे रोष को शान्त करने के लिये अभिमत हो सकता है।।22।।

शब्दार्थ – अवेक्षमाणे = विचार, मुञ्चानि = छोड़ूँ, मातरि = माता कैकेयी का, स्वधनम् = अपने राज्य को, दोषेषु = दोष होने पर, रोषणाय = क्रोध के लिए, त्रिषु पातकेषु = तीनों पाप (माता वध, पिता वध, अनुज वध)

टिप्पणी – स्वधनम् = स्वस्य धनम् (षष्ठी तत्पुरुष समास), अवेक्षमाणे = सप्तमी विभक्ति एकवचन, हरन्त्याम् = सप्तमी विभक्ति एकवचन, रोषणाय = चतुर्थी विभक्ति एकवचन।

प्रस्तुत श्लोक में परिकर अलंकार है। यहाँ वसन्ततिलता छन्द है जिसका लक्षण इस प्रकार है **''उक्ता वसन्ततिलका तभजा जगौ गः।''** अर्थात् जिस छन्द में तगण, भगण, जगण और अन्त में दो गुरु वर्ण हों, तो वह वसन्ततिलका छन्द है।

मूलपाठ –

लक्ष्मणः – (सबाष्पम्) हा धिक्! अस्मान् अविज्ञायोपालभसे।

यत्कृते महति क्लेशे राज्ये मे न मनोरथः।

वर्षाणि किल वस्तव्यं चतुर्दश वने त्वया ।।23।।

अन्वयः – यत्कृते महति क्लेशे राज्ये मे मनोरथः न। चतुर्दशवर्षाणि त्वया वने वस्तव्यं किल।

व्याख्या–यत्कृते–यत्कृते येन कारणेन कृते आर्येण समुत्पादिते महति दुरन्ते क्लेशे खेदे पितृमोहप्राप्तिरूपे दुःखे राज्ये राज्यविषये मे मम मनोरथः नास्ति। नेदं राज्यापहरणं मद्रोषकारणम् किन्तु पितृपादानां मोहप्राप्तिरेव। पितृमोहप्राप्तौ हेतुमाह चतुर्दशवर्षाणि त्वया वने वस्तव्यं किल। इयं कैकेयी भरताय राज्यं याचमाना तावन्मात्रेणैव न सन्तुष्टा किन्तु भवत्कृते चतुर्दशवर्षपर्यन्तं वनवासमपिप्रार्थितवती, यदर्थे पितृपादानां मोहप्राप्तिरित्यस्मदुःखकारणमित्यर्थः। लक्ष्मणेन स्वकोपकारणे निवेदिते रामोऽपि राज्ञो मोहकारणं चतुर्दशवर्षपर्यन्तं स्वकीयवनवासमत्वाह–अत्रेत्यादि। अत्र अस्मिन्नेवार्थे चतुर्दशवर्षवनवासविषये न तु मदभिषेक विघातविषये। तत्र भवान् पूज्यः पिता। हन्त इति खेदे। निवेदितम् प्रकटितम्। अप्रभुत्वम् अधीरत्वम्। राज्ञोऽधीरतव रामस्य खेदविषयः इत्यर्थः।।23।।

अनुवाद –

लक्ष्मण – (रुंधे कण्ठ से) हाय! मेरा अभिप्राय न जानकर उलाहना दे रहे हैं जिसके लिये आपको अथवा पिताजी को इतना बड़ा क्लेश हो रहा है उस राज्य के प्रति हमारी अभिलाषा नहीं है, किन्तु मुझे दुःख इस बात का है कि आपको चौदह वर्षपर्यन्त वन में रहना पड़ेगा (जो विवाह-शुल्क की परिधि से बाहर है)।।23।।

शब्दार्थ – यत्कृते = जिस कारण से, महति क्लेशे = अत्यन्त कष्टप्रद दुःख, राज्ये = राज्य प्राप्ति, मनोरथः न = अभिलाषा नहीं है, वने = जंगल में।

टिप्पणी – यत्कृते = यस्य कृते (षष्ठी तत्पुरुष समास), त्वया = युष्मद् शब्द, तृतीया विभक्ति एकवचन, वर्षाणि = प्रथमा विभक्ति बहुवचन, महति = सप्तमी विभक्ति एकवचन।

प्रस्तुत श्लोक में अनुष्टुप् छन्द है।

मूलपाठ –

रामः – अत्र मोहमुपगतस्तत्रभवान्? हन्त! निवेदितमप्रभुत्वम्। मैथिलि!

मङ्गलार्थेऽनया दत्तान् वल्कलांस्तावदानय।

करोम्यन्यैनृपैर्धर्मं नैवाप्तं नोपपादितम्।।24।।

अन्वयः – अनया दत्तान् वल्कलान् चीराणि मङ्गलार्थे आनय तावद् अन्यैः नृपैः नैवाप्तम् नैवोपपादितं धर्मं करोमि ।।24।।

व्याख्या – मङ्गलार्थे इति–अनया अवदातिकया चेट्या दत्ताम् समाहृताम् वल्कलान् चीराणि मङ्गलार्थे वनवासानुष्ठाननिर्विघ्नसमाप्त्यर्थं यद् मङ्गलं तदर्थे, आनय तावत् मह्यं देहि। वने वसन्नहम् तपः आचरिष्यामि तत्रायं वल्कलो मे मङ्गलं करोतु नामेत्यर्थः। अन्यैः पूर्वजैः नृपैः राजभिः नैवाप्तम् नावसरो लब्धः। नोपपादितम् न चाचरितम् एवं भूतं धर्मम् आचरामि। अयं भावः–मत्पूर्वजाः 'वार्धक्ये मुनिवृत्तीना'मिति कालिदाससूक्तरीत्या वृद्धावस्थायां वल्कलं परिधाय मुनिवृत्तयः भवन्ति मया तु किशोरावस्थायामेवायमवसरो लब्धः। किञ्चैतादृशं चतुर्दशवर्षपर्यन्तं वनवासरूपपित्राज्ञापालनव्रतमपि न केनचिदनुष्ठितम्। मया तु प्राप्तमेवेति सर्वापेक्षया स्वोत्कर्षः सूच्यते। व्यतिरेकालङ्कारो व्यङ्ग्यः। अनुष्टुप् छन्दः।।24।।

अनुवाद –

राम – क्या मेरे वनवास के कारण महाराज मूर्च्छित हो गये। तब तो बड़ा शोक है। उन्होंने अपनी अधीरता ही प्रकट कर दी।

अच्छा मैथिलि!

इस समय उपस्थित हुए इस मङ्गल कार्य के लिये अवदातिका द्वारा लाये गये वल्कल मुझे दो। इसे धारण कर मैं ऐसे धर्म का आचरण करूँगा जिसे किसी अन्य राजा ने आज तक न तो प्राप्त किया है और न आचरण करके दिखाया ही है।।24।।

शब्दार्थ – अनया = इस सेविका के द्वारा, दत्तान् = दिए गए, वल्कलान् = वल्कल वस्त्रों को, मङ्गलार्थे = मंगल के लिए, आनय = लाओ, अन्यैनृपैः = अन्य पूर्ववर्ती राजाओं के द्वारा, नैवाप्तम् = नहीं दिया गया, नोपपादितम् = न ही धारण किया गया।

टिप्पणी – मङ्गलार्थे = मङ्गल एव अर्थः यस्य (बहुव्रीहि समास), नोपपादितम् = न+उपपादितम् (गुण सन्धि), वल्कलांस्तावद् = वल्कलाः+तावद् (विसर्ग सन्धि), करोम्यन्यै = करोमि+अन्यै (यण् सन्धि), नैवाप्तम् = न+एवाप्तम् (वृद्धि सन्धि)।

प्रस्तुत श्लोक में व्यतिरेक अलंकार और अनुष्टुप् छन्द है।

मूलपाठ –

सीता – गृह्णात्वार्यपुत्रः। (गृह्णदु अय्यउत्तो।)

रामः – मैथिलि! किं व्यवसितम्?

सीता – ननु सहधर्मचारिणी खल्वहम्। (णं सहधम्मआरिणी क्खु अहं।)

रामः – मयैकाकिना किल गन्तव्यम्।

सीता – अतो न खल्वनुगच्छामि? (अदो णु क्खु अनुगच्छामि।)

अनुवाद –

सीता – आर्यपुत्र! यह है वल्कल, लीजिये।

राम – मैथिलि! अब तुमने क्या निश्चय किया है?

सीता – मैं तो आपके साथ ही धर्माचरण करूँगी।

राम – परन्तु मुझे तो अकेले ही वन जाने को कहा गया है।

सीता – इसीलिये तो मुझे आपके साथ चलना है।

मूलपाठ –

रामः – वने खलु वस्तव्यम्।

सीता – तत् खलु मे प्रासादः। (तं क्खु मे पासादो।)

रामः – श्वश्रूश्वशुरशुश्रूषापि च ते निर्वर्तयितव्या?

सीता – एनामुद्दिश्य देवतानां प्रणामः क्रियते। (णं उद्दिसअ देवदानं पणामो करीअदि।)

रामः – लक्ष्मण! वार्यतामियम्।

लक्ष्मणः – आर्य! नोत्सहे श्लाघनीये काले वारयितुमत्रभवतीम्। कुतः –

अनुचरति शशाङ्कं राहुदोषेऽपि तारा
पतति च वनवृक्षे याति भूमिं लता च।
त्यजति न च करेणुः पङ्कलग्नं गजेन्द्रं
व्रजतु चरतु धर्मं भर्तृनाथा हि नार्यः।।25।।

अन्वयः – तारा शशाङ्कं राहुदोषेऽपि अनुचरति। किञ्च वनवृक्षे पतति लता भूमिं याति। करेणुः पङ्कलग्नं गजेन्द्रं च न त्यजति। व्रजतु धर्मं चरतु हि नार्यः भर्तृनाथा भवन्ति।।25।।

व्याख्या – अनुचरत्विति–तारा = चन्द्रपत्नी रोहिणी। शशाङ्कम् = जन्म राहुदोषेऽपि राहुकृतोपरागदोषेऽपि आपत्तिकालेऽपीत्यर्थः। अनुचरति = अनुगच्छति, न तु स्वामिनं विपद्ग्रस्तं दृष्ट्वा तं त्यजति। वनवृक्षे = वन्ये तरौ, पतति सति, लता = वल्लरी च तेन सहैव भूमिं याति = निपतति। करेणुः = हस्तिनी पङ्कलग्नं पङ्के लग्नम् पङ्कलग्नम् = कर्दमनिमग्नं गजेन्द्रम् न त्यजति नैव मुञ्चति। विपन्नावस्थायामपि तमनुसरत्येव। अतः इयं वनं व्रजतु स्वपतिना सह गच्छतु। धर्मं पत्यनुसरणरूपं पातिव्रत्यरूपं च चरतु = विदवातु। उक्तमर्थमर्थान्तरन्यासेन समर्थः यति–हि नार्यः = स्त्रियः भर्तृनाथाः = स्वामिपरतन्त्राः तदनुवृत्तिता समदुःखसुखता च तासाम् सदोचितैवेति भावः। अत्र सामान्येन विशेषस्य समर्थनादर्थान्तरन्यासः। हि शब्दः अस्यार्थस्य प्रसिद्धतां व्यनक्ति। 'सामान्यं वा विशेषो वा तदन्येन समर्थ्यते। यत्तु सोऽर्थान्तरन्यासः साधर्म्येणेतरेण वा।' इति तल्लक्षणम्। किञ्च 'दृष्टान्तस्तु सधर्मस्य वस्तुनः प्रतिबिम्बनमिति' लक्षणात् दृष्टान्तोऽपि।।25।।

अनुवाद –

राम – किन्तु वन में निवास करना होगा।

सीता – वह तो मुझे प्रासाद जैसा सुखदायी होगा।

राम – सास और ससुर की सेवा करना भी तो तुम्हारा धर्म है।

सीता – इस सेवा के लिये तो मैं देवताओं को ही प्रणाम करूँगी।

राम – लक्ष्मण! इन सीता को ऐसा करने से रोको।

लक्ष्मण – ऐसे शुभ अवसर के प्राप्त होने पर तत्र भवती आर्या को रोकने का साहस नहीं होता क्योंकि रोहिणी राहुग्रहणजन्य विपत्ति से ग्रस्त होने पर भी चन्द्रमा का अनुसरण करती है, लता पेड़ के गिरने पर उसके साथ ही पृथ्वी पर स्वयं भी गिर जाती है, हथिनी अपने हाथी को कीचड़ में फंसा देखकर कभी उसका परित्याग नहीं करती इसलिये इन्हें भी अपने साथ चलने दीजिये और पातिव्रत्य-धर्म का पालन करने दीजिये क्योंकि स्त्री का पति ही सर्वस्व है।।25।।

शब्दार्थ – राहुदोषेऽपि = राहु के द्वारा ग्रस्त हो जाने पर भी, शशाङ्कम् = चन्द्रमा का, वनवृक्षे = जंगल के पेड़ के, पतति = गिर जाने पर भी, करेणुः = हस्तिनी, पङ्कलग्नम्= कीचड़ से लिपटे हुए, गजेन्द्रम् = गजराज को, न च त्यजति = नहीं छोड़ती, भर्तृनाथा = पति पर ही आश्रित।

टिप्पणी – पङ्कलग्नम् = पङ्के लग्नम् (षष्ठी तत्पुरुष समास), गजेन्द्रम् = गजानां इन्द्रः (षष्ठी तत्पुरुष समास), भर्तृनाथा = भर्ता नाथः यासां ताः (बहुव्रीहि समास), राहुदोषः = राहुः दोषः (तृतीया तत्पुरुष समास), राहुदोषेऽपि = राहुदोषे+अपि (पूर्वरूप सन्धि)।

प्रस्तुत श्लोक में दृष्टान्त अलंकार है। यहाँ मालिनी छन्द है जिसका लक्षण इस प्रकार है **''ननमयययुतेयं मालिनी भोगिलोकैः''** अर्थात् जहाँ दो नगण, एक मगण और दो यगण हों, वहाँ मालिनी छन्द होता है।

मूलपाठ – **(प्रविश्य)**

चेटी – जयतु भट्टिनी। नेपथ्यपालिन्यार्यरेवा प्रणम्य विज्ञापयति–अवदातिकया सङ्गीतशालाया आच्छिद्य वल्कला आनीताः। इमेऽपरा अननुभूता वल्कलाः। निर्वर्त्यतां तावत् किल प्रयोजनमिति। (जेदु भट्टिणी। णेवच्छपालिणी अय्यरेवा पणमिअ विण्णवेदि–ओदादिआए सङ्गीदसालादो आच्छिन्दिअ वक्कला आणीदा। इमा अवरा अणणुहूदा वक्कला। णिब्बत्तीअदु दाव किल पओअणं त्ति।)

रामः – भद्रे! आनय, सन्तुष्टैषा। वयमर्थिनः।

चेटी – गृह्णातु भर्ता। (गृह्णादु भट्टा।) (तथा कृत्वा निष्क्रान्ता)

(रामो गृहीत्वा परिधत्ते)

अनुवाद – (चेटी का प्रवेश)

चेटी – जय हो महारानी जी की। नेपथ्य की रक्षिका आर्यरेवा प्रणामपूर्वक निवेदन कर रही हैं कि अवदातिका संगीतशाला से वल्कल चुराकर लाई है। ये दूसरे वल्कल हैं जो सर्वथा नवीन हैं। अतः इसी से अपनी आवश्यकता पूरी कीजिये।

राम – भद्रे, तो लाओ यह तो वल्कल पहनकर अपना मनोरथ पूर्ण कर चुकी है किन्तु इसकी हमें ही आवश्यकता है।

चेटी – लीजिये प्रभु। (वल्कल देकर प्रस्थान करती है) .

(राम लेकर वल्कल धारण करते हैं)

मूलपाठ –

लक्ष्मणः – प्रसीदत्वार्यः।

निर्योगाद् भूषणान्माल्यात् सर्वेभ्योऽर्धं प्रदाय मे।
चिरमेकाकिना बद्धं चीरे खल्वसि मत्सरी ।।26।।

अन्वयः – निर्योगात् भूषणात् माल्यात् सर्वेभ्यः अर्धं मे प्रदाय एकाकिना चीरं बद्धम्। चीरे खलु मत्सरी असि।।26।।

व्याख्या – निर्योगात्=वस्त्रकञ्चुकाद्याच्छादनोपयोगिवसनात् भूषणात्= कटककुण्डलादेरलङ्कारात्, माल्यात् = पुष्पस्रजः एभ्यः सर्वेभ्यः मे = मह्यम् अर्धं प्रदाय = दत्त्वा भवतैतानि परिगृह्यन्ते किन्तु एकाकिना केवलेन मह्यमप्रदायैव चीरम् = वल्कलं बद्धम् = परिहितम्। बहुमूल्यवस्त्राभरणादीनि संविभज्य भवता वार्यते इति दृष्टपूर्वः स्वभावः किन्तु अतिहीनमूल्यस्य वल्कलस्य संविभागमकृत्वा तत् केवलमेकाकी एव धारयसीति स्वार्थबुद्धित्वात् मे महान् खेद इत्याह–चीरे = वल्कले। खलु विषादार्थकमव्ययपदम्। मत्सरी = मत्सरेण युक्तः इदमपि मह्यं प्रदाय मया सहैव वनं गच्छेति लक्ष्मणाभिप्रायः। पर्यायोक्तिरलङ्कारः। अनुष्टप् छन्दः।।26।।

अनुवाद –

लक्ष्मण – आर्य मुझ पर प्रसन्न हों।

नाना प्रकार के वस्त्राभूषण माला आदि समस्त भोग्य वस्तुओं को मुझे आधा देकर तब आप धारण करते थे किन्तु इस वल्कल को मुझे दिये बिना ही आपने-अकेले पहन लिया अतः इस प्रकार की मत्सरता क्यों?।।26।।

शब्दार्थ – निर्योगाद् = वस्त्रादि से, भूषणात् = आभूषणों से, माल्यात् = माला आदि से, सर्वेभ्यः = समस्त वस्तुओं में से, मे = मुझे, अर्द्धं प्रदाय = आधा हिस्सा देकर, चीरम् = वल्कल वस्त्र, एकाकिना = अकेले ही, बद्धम् = धारण कर लिया, मत्सरी = लालची।

टिप्पणी – सर्वेभ्योऽर्धम् = सर्वेभ्यः+अर्धम् (पूर्वरूप सन्धि), खल्वसि = खलु+असि (यण् सन्धि), भूषणान्माल्यात् = भूषणात्+माल्यात् (व्यंजन सन्धि)।

प्रस्तुत श्लोक में पर्यायोक्ति अलंकार और अनुष्टुप् छन्द है।

मूलपाठ –

रामः – मैथिलि! वार्यतामयम्।

सीता – सौमित्रे! निवर्त्यतां किल। (सौमित्रे! णिवत्तीअदु किल।)

लक्ष्मणः – आर्ये!

गुरोर्मे पादशुश्रूषां त्वमेका कर्तुमिच्छसि?।
तवैव दक्षिणः पादो मम सव्यो भविष्यति।।27।।

अन्वयः – त्वम् एका मे गुरोः पादशुश्रूषां कर्तुम् इच्छसि। तव दक्षिणः पादः एषः सव्यः मम भविष्यति ।। २७ ।।

व्याख्या–त्वम् एका = एकाकिनी केवला मे = मम गुरोः पूज्यस्य ज्येष्ठ भ्रातुः पादशुश्रूषाम् = चरणसंवाहनादिपरिचर्यां कर्तुम् = विधातुम् इच्छसि = अभिलषसि,

एकाकिनी त्वमेव मे पूज्यस्य चरणसेवितुकामा, मामुक्तकार्यावसरतो वञ्चयसीति नोचितमित्यर्थः। अतः अत्रापि संविभागः कर्तव्य इत्याह–तव दक्षिणः पादः 'मम च एषः सव्यः' = वामो भविष्यति। अतो मत्परिचर्यार्थं वामपादं विसृज। भवत्या हि गौणरूपेणापि मह्यम् सेवावसरः प्रदातव्यः इति लक्ष्मणाभिप्रायः।।27।।

अनुवाद –

राम – मैथिलि, इन्हें ऐसा करने से रोको।

सीता – लक्ष्मण ऐसा आग्रह क्यों करते हो?

लक्ष्मण – क्या तुम अकेले आर्य के चरणों की सेवा करना चाहती हो। ऐसा कर मुझे इस सेवा से क्यों वञ्चित करना चाहती हो। अस्तु, दाहिने पैर की सेवा तुम करो और बायें पैर की सेवा मुझे प्रदान करो।।27।।

शब्दार्थ – त्वम् = तुम, एका = अकेली ही, मे गुरोः = मेरे बड़े भाई के, पादशुश्रूषाम् = चरणों की सेवा, कर्तुमिच्छसि = करना चाहती हो, दक्षिणः पादः = दाहिना पैर, सव्यः = बायाँ पैर।

टिप्पणी – पादशुश्रूषा = पादयोः शुश्रूषा (षष्ठी तत्पुरुष समास), गुरोर्मे = गुरुः+मे (विसर्ग सन्धि), तवैव = तव+एव (वृद्धि सन्धि)।

प्रस्तुत श्लोक में पर्यायोक्ति अलंकार और अनुष्टुप् छन्द है।

मूलपाठ–

सीता – दीयतां खल्वार्यपुत्रः। संतप्यते सौमित्रिः। (दीअदु क्खु अय्यउत्तो। सन्तप्पदि सौमित्ती।)

रामः – सौमित्रे! श्रूयताम्। वल्कलानि नाम –

तपःसङ्ग्रामकवचं नियमद्विरदाङ्कुशः।
खलीनमिन्द्रियाश्वानाां गृह्यतां धर्मसारथिः ।।28।।

अन्वयः – वल्कलानि तपःसङ्ग्रामकवचं नियमद्विरदाङ्कुशः इन्द्रियाश्वानां खलीनं धर्मसारथिः गृह्यताम्।।28।।

व्याख्या – तपःसङ्ग्रामकवचम् = तप एव संग्रामः युद्धं तत्र कवचं युद्ध शरीररक्षणार्थमाच्छादकरूपेण धारणीयकर्त्तव्यता। नियमद्विरदाङ्कुशः नियमः व्रतमेव द्विरदः हस्ती तस्य अङ्कुशः गजवशीकरणार्थमस्त्रविशेषः इन्द्रियाश्वानां खलीनम् इन्द्रियाणि एव अश्वा तेषां खलीनम् = मुखसंलग्ननियन्त्रणप्रग्रहः धर्मसारथिः धर्मरूपो यः रथस्तस्य सारथिः सञ्चालकः एवं भूतं वल्कलं गृह्यतामित्यारामः। अत्र वल्कलेषु कवचारोपे तपसि संग्रामारोपः कारणम् एवं वल्कलेषु अङ्कुशारोपे नियमे द्विरदारोपः कारणम्। किञ्च तत्रैव खलीनतारोपे इन्द्रियेषु अश्वारोहकारणम् तेन परम्परित रूपकमलङ्कारः। 'नियतारोपणोपायः स्यादारोपः परस्य यत् परम्परितमिति तल्लक्षणम्। किञ्च धर्मसारथिरित्यत्र वल्कलेषु सारथेरारोपः वाच्यः। धर्मे रथस्यारोपो व्यङ्ग्यः। एवमत्रापि परम्परितमेव। अनुष्टुप् छन्दः।।28।।

अनुवाद –

सीता – आर्यपुत्र! लक्ष्मण दुःखी हो रहे हैं। अतः इन पर भी कृपा कीजिये।

राम – तो लक्ष्मण सुनो ये तुम्हारे लिये वल्कल है जो तपरूपी संग्राम के कवच हैं, नियमरूपी हाथी को वश में करने के लिये अंकुश हैं, इन्द्रियरूपी घोड़ों के लिये लगाम, किंबहुना धर्मरूपी रथ के ये सारथी हैं। अतः इन्हें पहनो।।28।।

शब्दार्थ – तपःसङ्ग्रामकवचम् = वल्कल ही तपस्या रूपी संग्राम के कवच हैं, नियमद्विरदाङ्कुशः = वल्कल ही संयम रूपी हाथी को वश में करने के अंकुश हैं, इन्द्रियाश्वानाम् = वल्कल ही इन्द्रिय रूपी घोड़ों के लिए लगाम हैं, धर्मसारथिः = वल्कल ही धर्म रूपी रथ के लिए सारथि हैं।

टिप्पणी – तपःसङ्ग्रामकवचम् = तप एव सङ्ग्रामः तपसङ्ग्रामः तस्य कवचम् (तत्पुरुष समास), नियमद्विरदङ्कुशः = नियमः एवं द्विरदः नियमद्विरदः तस्य अङ्कुशः (षष्ठी तत्पुरुष समास), इन्द्रियाश्वानाम् = इन्द्रियाणि एव अश्वाः (कर्मधारय समास), इन्द्रियाश्वानाम् = इन्द्रिय+अश्वानाम् (दीर्घ सन्धि)।

प्रस्तुत श्लोक में रूपक अलंकार और अनुष्टुप् छन्द है।

मूलपाठ –

लक्ष्मणः – अनुगृहीतोऽस्मि। (गृहीत्वा परिधत्ते)

रामः – श्रुतवृत्तान्तैः पौरैः सन्निरुद्धो राजमार्गः। उत्सार्यतामुत्सार्यतां तावत्।

लक्ष्मणः – आर्य! अहमग्रतो यास्यामि। उत्सार्यतामुत्सार्यताम्।

रामः – मैथिलि! अपनीयतामवगुण्ठनम्।

सीता – यदार्यपुत्र आज्ञापयति। (अपनयति) (जं अय्यउत्तो आणवेति।)

रामः – भोः भोः पौराः। शृण्वन्तु शृण्वन्तु भवन्तः –

स्वैरं हि पश्यन्तु कलत्रमेतद् वाष्पाकुलाक्षैर्वदनैर्भवन्तः।
निर्दोषदृश्या हि भवन्ति नार्यो यज्ञे विवाहे व्यसने वने च।।29।।

अन्वयः – भवन्तः वाष्पाकुलाक्षैः वदनैः एतत् कलत्रं स्वैरं हि पश्यन्तु नार्यः यज्ञे विवाहे व्यसने वने च हि निर्दोषदृश्या भवन्ति।।29।।

व्याख्या – भवन्तः पुरवासिनो जनाः वाष्पाकुलाक्षैः = वाष्पैः अश्रुभिः आकुले पर्याकुले अक्षिणी नेत्रे येषां तैः वाष्पपरिप्लुतलोचनैः वदनैः मुखैरुपलक्षिताः भवन्तः इति एतत् पुरोदृश्यमां मम रामस्य कलत्रं भार्यां सीतां स्वैरं स्वच्छन्दं हि पश्यन्तु = विलोकयन्तु नार्यः = स्त्रियः यज्ञे = अश्वमेघादौ विवाहे = पाणिग्रहणावसरे व्यसने = विपत्काले श्मशानाद्युपगमनकाले वने च स्थिता निर्दोषदृश्याः –निर्दोषास्याश्च निर्दोषदृश्याः अथवा निर्दोषं यथा स्यात्तथा दृश्या भवन्ति। अत्रार्थान्तरन्यासः। सामान्यं वा विशेषेण विशेषस्तेन वा यदि। समर्थ्यते सोऽर्थान्तरन्यास इति तल्लक्षणात्। सीतादर्शनरूपं विशेषं यज्ञे विवाहे व्यसने वने च निर्दोषदृश्याः भवन्तीति सामान्येन समर्थनात्। इन्द्रवज्रोपेन्द्रवज्रयोस्साङ्कर्यादुपजातिश्छन्दः।।29।।

अनुवाद –

लक्ष्मण – आर्य मैं अनुगृहीत हुआ। (लक्ष्मण लेकर वल्कल पहनते हैं)

राम – मेरे वन जाने का समाचार सुनकर नगरवासियों को राजमार्ग अवरुद्ध हो गया है अतः इन्हे हटाओ; हटाओ।

लक्ष्मण – आर्य मैं आगे चलता हूँ। अरे भाई इन लोगों को हटाओ।

राम – मैथिलि! अपना घूँघट हटा लो।

सीता–जैसी आर्यपुत्र की आज्ञा।(घूँघट हटा लेती है।)

राम – नगर के रहने वाले लोगों! सुनिये, सुनिये।

यह मेरी पत्नी सीता है इन्हें आप लोग अपने मुखों पर अश्रुधारा बहाने वालों नेत्रों से स्वच्छन्द रूप से देख लें क्योंकि यज्ञ, विवाह, आपत्ति एवं वन में स्त्रियों का दर्शन निर्दोष कहा जाता है ।।29।।

शब्दार्थ – वाष्पाकुलाक्षैः = आँसुओं से भरे नेत्रों से, वदनैः = मुखों से, एतत्कलत्रम् = इस स्त्री सीता को, स्वैरम् = यथेच्छ, नार्यः = स्त्रियाँ, यज्ञे = यज्ञ में, विवाहे = विवाह के अवसर पर, व्यसने = विपत्ति के समय में, वने = वन में, निर्दोषदृश्याः = दोष रहित देखना।

टिप्पणी – वाष्पाकुलाक्षैः = वाष्पैः आकुले अक्षिणी येषां तैः (बहुव्रीहि समास), वाष्पाकुलाक्षैः = वाष्प+आकुलाक्षैः (दीर्घ सन्धि), पश्यन्तु = दृश्, लोट्, प्रथम पुरुष बहुवचन, भवन्ति = भू, लट्, प्रथम पुरुष बहुवचन।

प्रस्तुत श्लोक में अर्थान्तरन्यास अलंकार है। यहाँ उपजाति छन्द है जिसका लक्षण इस प्रकार है **''अनन्तरोदीरितलक्ष्मभाजौ पादौ यदीयावुपजातयस्ताः।''** जिस छन्द के चरणों में इन्द्रवज्रा और उपेन्द्रवज्रा दोनों छन्दों के लक्षण चरणभेद से उपलब्ध हों, वहाँ उपजाति छन्द होता है।

मूलपाठ – (प्रविश्य)

काञ्चुकीयः – कुमार! न खलु न खलु गन्तव्यम्। एष हि महाराजः,

श्रुत्वा ते वनगमनं वधूसहायं
सौभ्रात्रव्यवसितलक्ष्मणानुयात्रम्।
उत्थाय क्षितितलरेणुरूषिताङ्गः
कान्तारद्विरद इवोपयाति जीर्णः।।30।।

अन्वयः – वधूसहायं सौभ्रात्रव्यवसितलक्ष्मणानुयात्रम् ते वनगमनं श्रुत्वा जीर्णः (एष महाराजः) उत्थाय क्षितितलरेणुरूषिताङ्गः सन् कान्तारद्विरद इव उपयाति।।30।।

व्याख्या – वधूसहायमिति–वधूसहायम् वधू भार्या सीता सहाया सङ्गिनी यस्मिन् कर्मणि तत्तथा। सौभ्रात्रव्यवसितलक्ष्मणानुयात्रम् सौभ्रात्रेण भ्रातृस्नेह महिम्ना अध्यवसिता संचेष्टिता यात्रा यस्मिन् कर्मणि तत्तथा ते तव वनगमनं वनाय प्रस्थानं श्रुत्वा आकर्ण्य एष शिथिलः महाराजः उत्थाय क्षितितलरेणुरूषिताङ्गः सन् क्षितितलरेणुभिः धरास्थधूलिभिः रूषिताङ्गः धूसरिताङ्गः जीर्णः जरया ग्रस्तः कान्तारद्विरदः गहनवनसंस्थितः करी इव यथा उपयाति भवन्तमनुगच्छति। अतस्तस्मिन् दयस्व। क्षणं प्रतीक्षस्व येन स वनगमनावसरे युष्मान् पश्येदित्यर्थः। तमुपेक्ष्यत्वद्वनगमनं नोचितम्। अस्मिन् अद्ये वधूसहायमित्यनेन रामवनगमनस्य दुःसहता सौभ्रात्यनेन लक्ष्मणस्यात्मीयता उत्थायेत्यनेन राज्ञो भृशमस्थिरता रेणुरूषिताङ्गः इत्यनेन राज्ञो दीनावस्था कान्तारद्विरदः इवेत्यनयोपमया तस्य नितान्त कष्टमयजीवनं च वर्णितम्। उपमालङ्कारः। विशेषणानां साभिप्रायत्वात्परिकरोऽपि। प्रहर्षिणीवृत्तम्।

अनुवाद – (प्रवेश कर)

कञ्चुकी – राजकुमार! मत जाइये, मत जाइये। इधर देखिये।

ये महाराज यह सुनकर कि आप वन को जा रहे हैं एवं आपके साथ केवल सुकुमारी सीता जा रही है और भ्रातृप्रेम से आकृष्ट हुए केवल लक्ष्मण ही आपका अनुगमन कर रहे हैं शोकविह्वल हो पृथ्वी पर से उठकर धूलि से लिपटे हुए वनैले वृद्ध हाथी के समान इधर ही आप लोगों को देखने के लिये आ रहे है।।30।।

शब्दार्थ – वधूसहायम् = वधू सीता के सहित, सौभ्रात्रव्यवसितलक्ष्मणानुयात्रम् = भाई के प्रेम से युक्त लक्ष्मण के अनुगमन को, क्षितितलरेणुरूषिताङ्गः = पृथ्वी की धूल से धूसरित अंग वाला।

टिप्पणी – वधूसहायम् = वधूः सहायः यस्मिन् तत् (बहुव्रीहि समास), सौभ्रात्रव्यवसितलक्ष्मणानुयात्रम् = सौभ्रात्रेन व्यवसिता लक्ष्मण अनुयात्रा यस्मिन् तत् (बहुव्रीहि समास), क्षितितलरेणुरूषिताङ्गः = क्षितितलस्य रेणुभिः रूषितानि अङ्गानि यस्य सः (बहुव्रीहि समास), कान्तारद्विरद = कान्तारश्च द्विरदः (तत्पुरुष समास), इवोपयाति = इव+उपयाति (गुण सन्धि)।

प्रस्तुत श्लोक में उपमा और परिकर अलंकार है। यहाँ प्रहर्षिणी छन्द है जिसका लक्षण इस प्रकार है **''म्नौ भ्नौ गस्त्रिदशयतिः प्रहर्षिणीयम्''** अर्थात् जहाँ क्रमशः मगण, नगण, रगण और अन्त में एक गुरु वर्ण हो तथा तीसरे और दसवें वर्णों पर यति हो वहाँ प्रहर्षिणी छन्द होता है।

मूलपाठ –

लक्ष्मणः – आर्य!

चीरमात्रोत्तरीयाणां किं दृश्यं वनवासिनाम्?

रामः –

गतेष्वस्मासु राजा नः शिरःस्थानानि पश्यतु।।31।।

(इति निष्क्रान्ताः सर्वे)

अन्वयः – चीरमात्रोत्तरीयाणां वनवासिनां किं दृश्यम्। एतच्छ्रुत्वा रामो वदति। अस्मासु गतेषु राजा नः शिरःस्थानानि पश्यतु।।31।।

व्याख्या – चीरमात्रोत्तरीयाणाम्–चीरमात्रम् = वल्कलमात्रम् न तु पीताम्बरादि उत्तरीयं येषां ते तथाभूतानामस्माकम् वनवासाय प्रस्थानोन्मुखानाम् किं दृश्यं न किमपीत्यर्थः। एतेनानुगच्छतः राज्ञः प्रतीक्षार्थं स्वकीयावस्थानमनावश्य किमिति सूचितम् रामोऽपि तदेव समर्थयन्नाह–गतेष्विति। अस्मासु गतेषु राजानं प्रतीक्ष्यैव गतेषु वनं प्रस्थितेषु राजा नः शिरःस्थानानि प्रधानावासगृहादीनि पश्यतु = अवलोकयतु। अस्मदीयप्रधानावासदर्शनेनात्मानं सान्त्वयत्वित्यर्थः।

अनुवाद –

लक्ष्मण – आर्य, मात्र वल्कलधारी एवं वन के लिये प्रस्थान करने वाले हम लोगों के पास क्या रखा है जिसे वे देखना चाहते हैं।

राम – हम लोगों के चले जाने पर अब राजा हमारे निवासभूत स्थानों को देखा करेंगे।।31।।

शब्दार्थ – चीरमात्रोत्तरीयाणाम् = केवल वल्कल धारण करने वाले, वनवासिनाम् = वनवासी लोगों का, किम् = क्या, दृश्यम् = देखने योग्य है, अस्मासु गतेषु = हमारे चले जाने पर, राजा = महाराज दशरथ, नः = हमारे, शिरःस्थानानि = आत्मीय जनों को, पश्यतु = देखें।

टिप्पणी – चीरमात्रोत्तरीयाणाम् = चीरमात्रम् उत्तरीयं येषाम् (बहुव्रीहि समास), गतेष्वस्मासु = गतेषु+अस्मासु (यण् सन्धि), शिरःस्थानानि = शिरसः स्थनानि (तत्पुरुष समास), पश्यतु = दृश्, लोट्, प्रथम पुरुष एकवचन।

प्रस्तुत श्लोक में अनुष्टुप् छन्द है।

बोध प्रश्न

1) 'भतृनाथा हि नार्यः' कथन किसका है?

.....

.....

.....

2) 'इवाग्रतः' पद का सन्धि विच्छेद कीजिए।

.....

.....

.....

3) 'पङ्कलग्लम्' पद में कौन सा समास है?

.....

.....

.....

4) 'बाष्पाकुलाक्षैः' पद का समास विग्रह कीजिए।

.....

.....

.....

.....

5) त्रिविध पाप कौन-कौन से हैं?

.....

.....

.....

.....

अभ्यास प्रश्न

1) 'अनुचरति शशाङ्कं राहुदोषेऽपि तारा' श्लोक की व्याख्या कीजिए।

9.3 सारांश

महाकवि भास का प्रतिमानाटक यद्यपि रामायण को आधार बनाकर लिखा गया है तथापि यह उनकी मौलिकता तथा अद्भुत कल्पना कौशल का भी प्रतीक है। आपने देखा कि राम क्रुद्ध लक्ष्मण को समझाते हुए दशरथ और कैकेयी को निर्दोष बताते हैं। लक्ष्मण के क्रोध पर राम यह कहते हैं कि राज्य वस्तुतः कोई ऐसी वस्तु नहीं है जिसके लिए पिता महाराज दशरथ तथा माता महारानी कैकेयी पर दोष आरोपित किया जाए। राम की क्षमाशीलता यद्यपि लक्ष्मण को उद्विग्न करती है तथापि राम उन्हें शान्ति धारण करने के लिए कहते हैं। आपने यह भी देखा कि सीता भी लक्ष्मण को क्रुद्ध देखकर अत्यन्त आश्चर्यचकित होती हैं और राम से कहती हैं कि आज से पहले मैंने लक्ष्मण को इतना क्रोध करते हुए नहीं देखा। 14 वर्ष के लम्बे वनवास पर ही उनका इतना बड़ा क्रोध है। पूछे जाने पर लक्ष्मण स्वयं भी अपने कोप का कारण स्पष्ट करते हैं कि राज्याभिषेक न होने का मुझे इतना कष्ट नहीं है जितना कि आपके लिए दिए गए 14 वर्ष के वनवास से है। सीता राम को अकेले वनगमन के लिए उद्यत देखकर कहती हैं कि मैं आपकी सहधर्मचारिणी हूँ इसलिए मुझे आपके साथ ही चलना होगा। राम वन का भय दिखाकर सीता को वनगमन से रोकना चाहते हैं किन्तु वह कहती है कि जहाँ आप रहेंगे वहीं मेरे लिए महल होगा लक्ष्मण स्वयं भी सीता के वनगमन का समर्थन करते हैं और अपने तर्क से राम को निरुत्तर कर देते हैं। लक्ष्मण तर्क देते हैं कि राहु के द्वारा ग्रसित होने पर रोहिणी चन्द्रमा को नहीं छोड़ देती। महान् वृक्ष के गिर जाने पर उस पर आश्रित लता उस वृक्ष को नहीं छोड़ती, कीचड़ से सने हुए गजेन्द्र को छोड़कर हथिनी कब अलग होती है? इससे यह सिद्ध होता है कि नारी किसी भी परिस्थिति में अपने प्रियतम का अनुगमन करती है। इस प्रकार लक्ष्मण की बातें सुनकर राम सीता को अपने साथ वन जाने की अनुमति प्रदान करते हैं तथा सीता के कहने पर राम लक्ष्मण को भी अपने साथ वन आने की अनुमति प्रदान करते हैं। परस्पर वार्तालाप के अनन्तर वल्कल वस्त्र धारण कर वन जाने के लिए उद्यत हो जाते हैं। इस प्रकार प्रस्तुत इकाई में आपने भ्रातृ प्रेम तथा कर्तव्यनिष्ठा की अनूठी संकल्पना का अध्ययन किया है।

9.4 शब्दावली

विसर्जितः – जाने की आज्ञा दिया

शताकीर्ण – सैकड़ों वीरों को

न रुचितम् – यदि रुचिकर नहीं लगा

निर्मनस्विता – स्वाभिमान से शून्य होना

समम् – समान होना

भ्रकुटिः – भौंहें

रोषणाय – क्रोध के लिए

वने – जंगल में

मङ्गलार्थः	–	मंगल के लिए
गजेन्द्रम्	–	गजराज को
मत्सरी	–	लालची
दक्षिणः पादः	–	दाहिना पैर
नार्यः	–	स्त्रियाँ
पश्यतु	–	देखें

9.5 कुछ उपयोगी पुस्तकें

i) प्रतिमानाटकम् (अनु.) डॉ. श्री कृष्ण ओझा, आदर्श प्रकाशन, जयपुर ।

ii) प्रतिमानाटकम् (व्या.) डॉ. सावित्री गुप्ता, विद्यानिधि प्रकाशन, दिल्ली, 2006

iii) प्रतिमानाटकम् (व्या.) आचार्य जगदीश चन्द्र मिश्र, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, 2009

iv) प्रतिमानाटकम् (सम्पा.) श्रीधरानन्द शास्त्री, मोतीलाल बनारसीदास प्रकाशन, दिल्ली, 2016

v) संस्कृत साहित्य का समीक्षात्मक इतिहास (ले.) डॉ. कपिलदेव द्विवेदी, रामनारायणलाल विजयकुमार प्रकाशन, इलाहाबाद, 2018

9.6 बोध/अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न

1) 'भतृनाथा हि नार्यः' कथन लक्ष्मण का है।

2) 'इवाग्रतः' पद का सन्धि विच्छेद है – इव+अग्रतः।

3) 'पङ्कलग्लम्' पद में षष्ठी तत्पुरुष समास है।

4) 'बाष्पाकुलाक्षैः' पद का समास विग्रह – बाष्पैः आकुले अक्षिणी येषां तैः।

5) त्रिविध पाप है – माता वध, पिता वध, अनुज वध।

अभ्यास प्रश्न

इन प्रश्नों के उत्तर विद्यार्थी स्वयं लिखें।